

स्वामी दयानंद और स्वामी विवेकानंद तुलनात्मक अध्ययन

लेखक : - डॉ विवेक आर्य

इन दोनों महापुरुषों के विचारों में भारी भेद हैं। इसलिए इस विषय पर चिंतन की आवश्यकता है। मनुष्य जीवन का उद्देश्य सत्य को ग्रहण करना एवं असत्य का त्याग करना है। इसलिए हम भी उसी का अनुसरण करें। यही इस लेख का भी उद्देश्य है।

1. स्वामी दयानंद वेदों को ईश्वरीय वाणी होने के कारण सत्य मानते हैं। स्वामी दयानंद ने यह मान्यता वर्षों के अनुसन्धान, चिंतन, मनन एवं निधिध्यासन के पश्चात् स्थापित की थी। एक अनुमान से स्वामी दयानंद ने 5000 धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन उस काल में किया था जिसमें से 3000 पुस्तकें उन्हें उपस्थित थी। स्वामी विवेकानंद का वेदों में प्रवेश नहीं था। वे अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस द्वारा मान्य मूर्तिपूजा पद्धति एवं काली पूजा और वेदांत के उपासक थे। इसलिए स्वामी विवेकानंद की विचारधारा केवल पुराणों और वेदांत तक सीमित थी।

2. स्वामी दयानंद ने पुराणों को मनुष्यकृत सिद्ध किया। स्वामी जी ने बताया कि पुराण अनेक काल में विभिन्न मनुष्यों द्वारा रचे गए। पुराणों के रचनाकारों ने अपना नाम न देकर व्यास कृत दिखाकर एक अन्य प्रपंच किया था। पुराणों में वेद विरुद्ध मान्यताएं, परस्पर विरोध, देवी-देवताओं के विषय में अपमानजनक बातें जैसे उन्हें कामुकी, चरित्रहीन बताना, अज्ञानी बताना, परस्पर शत्रुता भाव आदि देखकर उन्हें कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति धार्मिक ग्रन्थ नहीं मान सकता। स्वामी विवेकानंद ने इतना गंभीर चिंतन पुराणों में धर्म-अधर्म विषय को लेकर नहीं किया था।

3. स्वामी दयानंद ने अपने अनुसन्धान से यह सिद्ध किया कि वेदों में गोमांस भक्षण और यज्ञ में पशुबलि आदि का उल्लेख नहीं है। मध्य काल में सायण-महीधर आदि ने वेदों के गलत अर्थ कर यह प्रपंच फैलाया। स्वामी विवेकानंद वेदों में गोमांस भक्षण और पशुबलि आदि स्वीकार करते हैं। वे यहाँ तक लिखते हैं कि प्राचीन काल में भारत देश इसलिए महान था क्योंकि यज्ञों में पशुबलि दी जाती थी और ब्राह्मण गोमांस भक्षण करते थे। संभवत उनकी बंगाली पृष्ठभूमि उन्हें इस मान्यता को स्थापित करने में सहायता करती थी। गोरक्षा के मुद्दे पर आपको RSS कभी स्वामी विवेकानंद का नाम लेते नहीं दिखेगा। स्वामी दयानंद का वेद और गोमांस के सम्बन्ध में चिंतन सभी को स्वीकारीय है।

4. स्वामी दयानंद ने अपने भागीरथ अनुसन्धान से यह सिद्ध किया कि वेदों के जो भाष्य पश्चिमी लेखक जैसे मैक्समूलर आदि कर रहे हैं, वे भ्रामक हैं। उनसे वेदों की प्रतिष्ठा की हानि होगी। स्वामी दयानंद मैक्समूलर महोदय को साधारण विद्वान् की श्रेणी का भी नहीं मानते। उन्होंने विदेशी लेखकों के विषय में एक लोकोक्ति के माध्यम से उनके ज्ञान के स्तर का समुचित आंकलन किया था। स्वामी दयानन्द लिखते हैं जिस देश में कुछ भी पैदावार नहीं होती वहाँ पर

अरंडी को भी वृक्ष समान समझा जाता है। वैसा ही स्तर विदेशी लेखकों का वेद सम्बन्ध में ज्ञान को लेकर है। विदेशों में संस्कृत एवं वेद विद्या के ज्ञान से कोई परिचित नहीं है। इसलिए मैक्समूलर आदि लेखक भी बड़े विद्वान् गिने जाते हैं। स्वामी विवेकानंद वेदों के भाष्यों के विषय में अनुसन्धान से परिचित नहीं थे। अन्यथा वे मैक्समूलर महोदय को आधुनिक सायण की उपाधि देकर महिमामंडन नहीं करते।

5. स्वामी दयानंद ने पाया कि हिन्दू समाज के पतन का मुख्य कारण मूर्ति पूजा और उससे सम्बंधित अन्धविश्वास है। उन्होंने मूर्तिपूजा को वेद विरुद्ध भी सिद्ध किया। स्वामी दयानंद ने ईश्वर के निराकार स्वरूप की स्तुति, प्रार्थना एवं उपासना करने का प्रावधान किया। यह मान्यता प्राचीन ऋषि परंपरा के अनुसार थी न कि कल्पित थी। स्वामी विवेकानंद जीवन भर मूर्तिपूजा का समर्थन करते रहे। उनकी अलवर नरेश के संग वार्तालाप को अधिकाधिक प्रचारित भी इसी उद्देश्य से किया जाता है। उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस भी मूर्तिपूजक थे। विडम्बना देखिये स्वामी दयानंद जिस अज्ञान रूपी खाई से हिन्दू समाज को निकालना चाहते थे हिन्दू समाज उसी खाई में और अधिक गहरे धसता चला गया। पहले राम और कृष्ण जी की मूर्तियां पूजी जाती थी। फिर कल्पित देव-देवियों जैसे काली, संतोषी माँ आदि को महत्व मिला। कालांतर में गुरुओं और मठाधीशों की मूर्तियां स्थापित हुईं। वर्तमान में मूर्तिपूजा में क्रमिक विकास हुआ। सभी पिछली स्थापित मूर्तियों का त्याग कर साईं बाबा उर्फ चाँद मियां एक मस्जिद में रहने वाले मुस्लिम फकीर को चमत्कार की आशा से पूजना आरम्भ कर दिया। इससे भी मन नहीं भरा तो अजमेर के मुस्लिम ख्वाजा गरीब नवाज से लेकर भारत वर्ष में स्थित सैकड़ों इस्लामिक कब्रों पर जाकर अपना सर पटकने लगे। क्यों? केवल चमत्कार की आशा से। कर्म करने का जो सन्देश श्री कृष्ण ने गीता में दिया था उसकी धज्जियाँ स्वयं हिंदुओं ने उड़ा दी। इस मूर्ति पूजा ने हिन्दू को आलसी, अकर्मण्य, अपुरुषार्थी, भोगवादी, अज्ञानी बना दिया। मूर्तियों को भगवान मानकर पूजने से यही हानि होती है। स्वामी दयानंद अपनी दूरदृष्टि एवं अनुभव से यह समझ गए एवं हमें समझा गए थे। जबकि स्वामी विवेकानंद उसी रोग का समाधान करने के स्थान पर उसी को बढ़ावा देते रहे। RSS द्वारा कुछ दिन पहले मुस्लिम फकीर साईं बाबा की पूजा को हिन्दू दर्शन कहकर स्वीकारीय बताने को आप क्या कहेंगे? कल को हिन्दू समाज में कोई अफजल गुरु और अजमल कसाब का मकबरा बना देगा और हिन्दू उसे पूजने लगेंगे। तो क्या RSS उसे भी हिन्दू दर्शन कहकर पूजने की मान्यता देगा? स्वयं चिंतन करें।

6 . स्वामी विवेकानंद मांसाहारी थे, धूम्रपान के व्यसनी थे। 32 वर्ष की आयु में अस्थमा एवं मधुमेह से उनकी असमय मृत्यु हो गई। मांसाहार के इतने शौकीन थे कि जब अमरीका गए तब केवल मांस खाया। कुछ भक्तों ने पूछा कि आपके मांसाहारी होने से आपके देशवासी नाराज होंगे। स्वामी विवेकानंद बोले कि जो नाराज होते हो तो मेरे लिए यहाँ पर शाकाहारी भोजन की व्यवस्था कर दो। स्वामी दयानंद ब्रह्मचर्य और प्राणायाम के बल पर बलिष्ठ शरीर के स्वामी, शाकाहारी होने के साथ-साथ निरामिष भोजी भी थे। योग विद्या के बल पर शारीरिक, आध्यात्मिक उन्नति कर अपने मिलने वालों के समक्ष मनोहर छवि प्रस्तुत करते थे। जिससे उनका सत्संग करने वाले भी अपना जीवन उन्नत करने का प्रयास करें। कोई व्यक्ति अपने नाम के समक्ष स्वामी शब्द लगाता है तो वह किसका स्वामी होता है? धन, सम्पदा और पद का

स्वामी तो वह होता नहीं अपितु अपनी इन्द्रियों और मन का स्वामी होता है। स्वामी विवेकानंद की रूचि मांसभक्षण और धूम्रपान में देखकर उन्हें अपनी इन्द्रियों का स्वामी किसी भी आधार पर नहीं कहा जा सकता। एक मांसाहारी, धूम्रपान व्यसनी सन्यासी को मैं अपना आदर्श किसी भी आधार से नहीं मान सकता।

7. स्वामी विवेकानंद के विचारों में मुझे कहीं भी एकरूपता नहीं दिखती। एक ओर वे भारतीय दर्शन के ध्वजावाहक हैं वही दूसरी ओर विदेशियों की भरपूर की प्रशंसा करते दिखते हैं। कभी वे ईसाईयों की आलोचना करते हैं, तो कभी ईसा मसीह के गुणगान करते दिखते हैं। कभी इस्लाम की आलोचना करते हैं, तो कभी मुहम्मद साहिब के गुणगान करते दिखते हैं। कभी अंग्रेजों के भारतीयों को गुलाम बनाने पर निंदा करते हैं, तो कभी अंग्रेजों की प्रशंसा करते दिखते हैं। उनके विचारों में एकरूपता, सिद्धांत की स्थापना जैसा कुछ नहीं दिखता। उनके इसी चिंतन का असर रामकृष्ण परमहंस मिशन पर भी वर्तमान में स्पष्ट दिखता है। 1990 में इस मिशन ने "हम हिन्दू नहीं हैं" के नाम से कोर्ट में याचिका दायर कर अपने आपको हिंदुओं से अलग दिखाने का प्रयास किया था। वर्तमान में ईसा मसीह की वाणी और मुहम्मद साहिब के विचार जैसी पुस्तकें इस मिशन द्वारा प्रकाशित होती हैं। सेक्युलर लबादे में अपने आपको लपेट कर दुकानदारी अच्छे से चलती है। स्वामी दयानंद के समान कड़वे सत्य को बोलने से आलोचना का शिकार होना पड़ता है। मगर योगी लोग मान-प्रतिष्ठा से अधिक सत्य का मंडन और असत्य का खंडन करते हैं। यही कारण है कि सत्य के उपदेशक स्वामी दयानंद को हिन्दू समाज उतना मान नहीं देता, जितना मान मीठी मीठी बात करने वाले स्वामी विवेकानंद को देता है।

8. स्वामी विवेकानंद के शिकागो भाषण का बड़ा महिमामंडन किया जाता है। कुछ लोग इस भाषण को दुनिया में परिवर्तन करने वाला भाषण करार देते हैं। मैंने 1893 में विश्व धर्म समेलन में दिए गए अन्य वक्ताओं के भाषणों को पढ़ा। स्वामी विवेकानंद की उपस्थिति में उसी मंच से अनेक ईसाई वक्ताओं ने वेदों में गोमांस भक्षण और यज्ञों में पशुबलि जैसे विषयों पर वेदों की प्रतिष्ठा को धूमिल करने वाले अनेक भाषणों को पढ़ा था। स्वामी विवेकानंद ने उनका किसी भी प्रकार से प्रतिकार नहीं किया। पाठक इस विषय में स्वयं निणय करें। क्यों? स्वामी विवेकानंद आलोचना का शिकार नहीं बनना चाहते थे। जहाँ तक कुछ ईसाईयों को वेदान्त में दीक्षित करने का प्रश्न है। साउथ अफ्रीका में प्रवासी हिंदुओं को तेजी से ईसाई बनते देख उन्हें शुद्ध करने वाले भवानीदयाल सन्यासी ने लिखा कि जिस काल में स्वामी विवेकानंद चंद ईसाईयों को वेदांती बनाने में लगे हुए थे। उसी काल में हज़ारों की संख्या में अफ्रीका और लैटिन अमरीका में हिंदुओं को ईसाई बनाया गया। मेडागास्कर उपद्वीप में तो एक भी प्रवासी भारतीय हिन्दू नहीं बचा था। स्वामी विवेकानंद ने ईसाई मिशनरियों का कोई प्रतिकार नहीं किया। वहीं पाठक स्वामी दयानंद द्वारा 1869 में हुए सैकड़ों पंडितों के साथ किये गए काशी शास्त्रार्थ को इतिहास की सबसे बड़ी घटना क्यों नहीं मानते? जब स्वामी दयानंद ने शताब्दियों से प्रचलित धार्मिकअन्धविश्वास को मूल से नष्ट करने का संकल्प लिया था। स्वामी दयानंद पद, धन, प्रतिष्ठा आदि किसी भी प्रकार के प्रलोभन में नहीं आये। उन्हें प्राण हानि तक का खतरा नहीं था। काशी नरेश से लेकर सभी पंडित अपनी रोजी-रोटी के चलते उनके विरुद्ध थे। मगर सत्य के उपासक दयानंद को केवल ईश्वर विश्वास और वेदों के ज्ञान पर भरोसा था। इस घटना

का महिमामंडन शिकागो भाषण के समान किया जाता तो आज हिंदुओं की संतान मुस्लिम पीरों और कब्रों पर सर न पटक रही होती। क्योंकि वेदों के सत्य ज्ञान का प्रकाश होता जिससे समाज का हित होता।

इतने भारी सिद्धांतिक भेद होने के कारण भी स्वामी दयानंद के स्थान पर स्वामी विवेकानंद का महिमामंडन करना हिन्दू समाज को शोभा नहीं देता। दयानंद केवल और केवल सत्य के उपासक थे। जबकि विवेकानंद सुनियोजित छवि निर्माण (Planned Marketing) के उत्पादक थे। आज हिन्दू समाज स्वामी दयानंद के विचारों से स्वाध्यायशील न होने के कारण परिचित ही नहीं है। उन्हें कोई भी स्वामी दयानंद के विरुद्ध यह कहकर भ्रमित कर देता है कि स्वामी दयानंद मूर्तिपूजा और पुराणों का विरोध करते थे। इसलिए उनकी मत सुनिये। वे आंख बंदकर तत्काल उन पर विश्वास कर लेते हैं। इसी प्रकार से कोई स्वामी विवेकानंद को सबसे बढ़िया कहकर उनका महिमामंडन कर देता है। वे आंख बंदकर तत्काल उन पर भी विश्वास कर लेते हैं। यह पुराना रोग है।

हिन्दू समाज की सामाजिक, राजनीतिक और आध्यात्मिक व्याधि का उपचार केवल और केवल स्वामी दयानंद की कड़वी दवाई है। जिसे लेने से वह सदा हिचकता रहता है।

मैंने अपनी क्षमता से अपने विचार प्रकट किये हैं। पाठक अपनी योग्यतानुसार निर्णय करें कि स्वामी दयानंद को उनका वास्तविक स्थान और मान हिन्दू समाज क्यों न दे?

प्रेषक : - आर्य रविन्द्र सिंह